बिजॉय लक्ष्मी कॉटन मिल्स लिमिटेड

बनाम

पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य।

जनवरी 18, 1967

[के. सुब्बा राव, सी.जे., जे.सी. शाह, एस.एम.सीकरी

बनाम रामास्वामी और सी.ए. वेदलिंगम, जेजे.]

भारत का संविधान अनुच्छेद 166(2) और (3) राज्यपाल द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार प्रमाणीकरण-क्या राज्यपाल द्वारा कानून के अनुसार कार्य किया जाना निश्चयात्मक है।

पश्चिम बंगाल भूमि विकास और योजना अधिनियम, 1948 अधिसूचना धारा 4 के तहत और घोषणा धारा 6 के तहत, क्या राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि पर विचार किया जाना आवश्यक है। अधिनियम 166(3) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए कार्य/व्यवसाय के नियमों के तहत स्थायी आदेश देने वाले मंत्री द्वारा क्या स्थायी आदेश के अंतर्गत आने वाले अधिनियम के तहत कार्यवाही करना व उसके द्वारा निपटाया जाना आवश्यक है।

राज्य सरकार ने फरवरी 1955 में एक अधिसूचना पश्चिम बंगाल भूमि विकास और योजना की धारा 4 के तहत अधिनियम 1948 इस आशय की जारी की कि भूमि का एक बड़ा भाग जिनमें से कुछ अपीलार्थी के थे उनकी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए आवश्यकता होने की संभावना थी, इस अधिसूचना पर राज्य सरकार के भूमि एवं राजस्व विभाग में सहायक सचिव ने हस्ताक्षर किए थे तब एक विकास योजना तैयार की गई थी और उस पर आपत्तियां आमंत्रित की गई और निस्तारित की गई। भूमि योजना समिति जो कि अधिनियम भूमि नियोजन समिति जो अधिनियम के तहत निर्धारित प्राधिकारी है ने अधिनियम की धारा 6 अनुशंसित स्वीकृति योजना के तहत एक घोषणा जारी की। यह घोषणा सरकार द्वारा जुलाई 1956 को जारी की गई थी और उस पर उसी विभाग के उप सचिव द्वारा हस्ताक्षर किये गये।

अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका दायर की तथा प्रार्थना की गई कि धारा 4 के तहत अधिसूचना और धारा 6 के तहत घोषणा को निरस्त किया जाए उनके द्वारा यह तर्क दिया गया कि संपूर्ण प्रक्रिया कई कारणों से शून्य है (i) कि अधिसूचित, घोषणा और अधिसूचित क्षेत्र के लिए योजना की मंजूरी सभी सहायक या उपसचिव और राज्य सरकार द्वारा की गई थी, यह नहीं कहा जा सकता कि प्रक्रिया में सरकार ने अपने मस्तिष्क का उपयोग नहीं किया हो, राज्य की कार्यकारी

शक्ति संविधान के अनुच्छेद 154 (1) के तहत राज्यपाल में निहित है। राज्यपाल की संतुष्टि के लिए अधिनियम की धारा 4 और 6 के अन्तर्गत विचार किया जाता है (ii) राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 166 (3) के तहत बनाए गए कार्यकारी/व्यवसाय नियमों के तहत प्रभारी मंत्री ने 29 नवंबर 1959 को स्थाई आदेश जारी किया था जिसमें उन मामलों को निर्दिष्ट किया गया और उन्हें संदर्भित किया गया जो आवश्यक थे क्योकि अनुच्छेद के तहत की गई कार्यवाही उस स्थायी आदेश के कुछ मदों के भीतर आती है, उन्हें केवल मंत्री द्वारा ही निपटा जा सकता था और वास्तव में और किसी तरह से निपटा नहीं जाता सकता था।

दूसरी और राज्य की और से यह तर्क दिया गया कि- (i) जैसे राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 166(2) के अधीन बनाए गए नियम को अधिसूचना और घोषणा के अनुसार प्रमाणित किया गया था और जैसा कि उसमें यह भी कहा गया था कि राज्यपाल की राय थी कि सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि की आवश्यकता थी, इस प्रकार यह दर्शाता है कि राज्यपाल की संतुष्टि की गई थी, अर्पीलार्थी के लिए पीछे हटना और उनकी वैधता पर सवाल उठाना खुला नहीं था और (ii) मामले में की गई कार्यवाही स्थायी आदेश के किसी भी मद के तहत विफल नहीं हुई और इसलिए आदेश जारी करने से पहले मंत्री के ध्यान में लाने की आवश्यकता नहीं थी।

एकल पीठ जिसने याचिका की सुनवाई की ने याचिका खारिज कर दी, अपीलार्थी की दलीलों में यह अभिनिर्धारित किया गया कि इसके अधीन की गई कार्यवाहियां स्थाई आदेश की मद 18 के अंतर्गत आती है जिसमें सभी मामले भूमि योजना समिति और मद 29 द्वारा उठाए जाने का प्रस्ताव भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत मामलों से संबंधित है, शामिल होते हैं इसलिए उन्हें मंत्री के पास भेजा जाना चाहिए था, चूंकि ऐसा स्वीकार नहीं किया गया था, संपूर्ण कार्यवाही अवैध व शून्य थी। हालांकि, एक खंड पीठ ने अपील में यह विचार व्यक्त किया कि जबकि स्थायी आदेश की मद 29 बिल्कुल भी लागू नहीं होती है उस स्थिति में मद 18 के तहत यह कार्यवाही करना आवश्यक था। धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी होने के बाद कार्यवाही मंत्री द्वारा निपटाया जाना चाहिए। इसलिए उसने अधिसूचना को बरकरार रखा लेकिन बाद की सभी कार्यवाहियों को रद्द कर दिया।

इस न्यायालय के समक्ष अपील में विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह था कि क्या धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना वैध रूप से जारी की गई थी।

न्यायालय ने अपील निरस्त करते हुए अभिनिर्धारित किया

उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना की वैधता को सही ठहराया।

जब प्रमाणीकरण अनुच्छेद 166(2) के अनुसार होता है तो यह निश्चयात्मक होता है कि आदेश राज्यपाल द्वारा दिया गया है। लेकिन प्रश्न यह है कि क्या आदेश देने में राज्यपाल ने कानून के अनुसार कार्य किया है जो अधिनिर्णयन के लिए खुला है। (417 बी)

आर. चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य, (1964) 6 एस.सी.आर. 268, अनुसरण किया गया।

वर्तमान मामले में राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि आवश्यक नहीं थी क्योंकि यह कार्य प्राधिकार के अंतर्गत नहीं था जिसके संबंध में राज्यपाल से, संविधान द्वारा या उसके तहत अपने विवेक से कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। (418 डी-ई)

धारा 4 की शर्तें यह स्पष्ट करती हैं कि राज्य सरकार की संतुष्टि पर किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए किसी भूमि की आवश्यकता है या सार्वजनिक उद्देश्य के लिए किसी भूमि की आवश्यकता होने की संभावना है, एक अधिसूचना जारी की जाती है। हालांकि वर्तमान मामले में भूमि योजना समिति ने वास्तव में भूमि के अधिग्रहण और धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी करने की सिफारिश की थी लेकिन अधिनियम या नियमों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो राज्य सरकार की ओर से इस स्तर पर समिति से परामर्श करना अनिवार्य बनाता है। इसलिए स्थायी आदेश की

मद 18 लागू नहीं हुई। आदेश के अन्य मद भी लागू नहीं थे और इसलिए यह आवश्यक नहीं था कि कार्यवाही को मंत्री को भेजा जाए। (420 ई; 421-डी-ई)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1964 की सिविल अपील संख्या 216 और 217।

कलकत्ता उच्च न्यायालय के विरुद्ध अपील 1958 के मूल आदेश संख्या 397 व 398 में पारित निर्णय और आदेश 5 मार्च, 1959 से।

बिशन नारायण एवं बी.पी. माहेश्वरी, अपीलार्थी की ओर से (दोनों अपीलों में)

बी.सेन, डी.एन. मुखर्जी और पी.के.बोस, प्रत्यर्थी संख्या 1, 2 व 4 के लिए (दोनों अपीलों में)

एस.के.राय चौधरी, रामेश्वर नाथ, मोहिंदर नारायण और पी.एल. वोहरा, प्रत्यर्थी संख्या 3 के लिए (दोनों अपीलों में)

न्यायालयका निर्णय वेदलिंगम, जे. द्वारा सुनाया गया।

ये दोनो अपीलें, प्रमाणपत्र के आधार पर, कलकत्ता उच्च न्यायालय के 5 मार्च, 1959 के आदेश संख्या 397, 398, 1958 की अपीलों में दिए गए निर्णय के विरुद्ध निर्देशित हैं, जिसमें उच्च न्यायालय ने माना है कि

पश्चिम बंगाल भूमि विकास और योजना अधिनियम 1948 (डब्ल्यू.बी. अधिनियम XXI 1948) (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 4 के तहत, राज्य सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना वैध है। दोनों अपीलों में अपीलार्थी और प्रत्यर्थीगण एक समान है और दोनों में समान प्रश्न विचार के लिए उत्पन्न होते है।

सोसाइटी ऑफ फार्मर्स एंड रूरल इंडस्ट्रियलिस्ट्स, जिसका तीसरा प्रत्यर्थी सचिव है, ने पहले प्रत्यर्थी पश्चिम बंगाल राज्य, से बेहतर रहने की स्थिति बनाने के लिए एक कृषि कॉलोनी की स्थापना के लिए अनिवार्य रूप से कुछ भूमि अधिग्रहण करने का अनुरोध किया। पहले प्रत्यर्थी ने 4 फरवरी, 1955 को अधिनियम की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी की जिसमें कहा गया है कि लगभग 28.59 एकड़ भूमि, जिसका पूरी तरह से उसमें वर्णन किया गया है और घोला और नाटागढ़ के गांवों में स्थित है, की एक सार्वजनिक उद्देश्य के लिए आवश्यकता होने की संभावना है अर्थात एक कृषि कॉलोनी की स्थापना और बेहतर जीवन स्थितियों का निर्माण करना है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि इस अधिसूचना में शामिल भूमि का एक बड़ा हिस्सा अपीलार्थी मिल्स का था। उक्त अधिसूचना 17 फरवरी, 1955 को कलकत्ता गजट में प्रकाशित हुई थी। उक्त अधिसूचना पर पश्चिम बंगाल सरकार के भूमि और राजस्व विभाग के सहायक सचिव द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे।

प्रथम प्रत्यर्थी ने सोसायटी को एक विकास योजना तैयार करने और उसे कलेक्टर को सौंपने का निर्देश दिया, ताकि वह अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के अनुसार आपत्तियों को सुनने में सक्षम हो सके। लगभग 21 मार्च 1955 को सोसायटी ने एक विकास योजना प्रस्तुत की और कलेक्टर ने पश्चिम बंगाल भूमि विकास और योजना नियम, 1948 (बाद में इसे नियमों के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के नियम 5 (2) के तहत नोटिस जारी किया जिसमें योजना को मंजूरी दिए जाने पर, उसमें निर्दिष्ट समय के भीतर आपत्तियां आमंत्रित की गई हैं। योजना की मंजूरी के लिए अपीलार्थी-मिल्स द्वारा दायर की गई आपत्तियों को कलेक्टर द्वारा खारिज कर दिया गया था। 10 फरवरी, 1956 को भूमि योजना समिति, जो अधिनियम के तहत निर्धारित प्राधिकारी है, ने सोसायटी द्वारा प्रस्तुत योजना को स्वीकार करने और सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 6 के तहत एक घोषणा जारी करने की सिफारिश की। 21 जुलाई, 1956 को सरकार ने अधिनियम की धारा 6 के तहत घोषणा जारी की जिसे 9 अगस्त, 1956 को फिर से राज्य राजपत्र में प्रकाशित किया गया था। इस घोषणा पर पश्चिम बंगाल सरकार के भूमि और राजस्व विभाग के उप सचिव द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। 28 अगस्त, 1956 को अंतर्गत नियम 8 के तहत जमीनों पर कब्जा करने के इरादे का नोटिस जारी किया गया था।

13 सितंबर, 1956 को, अपीलार्थी-मिल्स ने कलकत्ता उच्च न्यायालय में, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत 1956 के सिविल नियम संख्या 2620 के तहत परमादेश प्रकृति की एक रिट प्रस्तुत कर प्रार्थना की कि राज्य सरकार और उसके अधिकारियों को निर्देश दिया जाए कि वे जारी किए गए नोटिस के आधार पर कोई कार्रवाई न करें या कोई कदम न उठाएं। इसने राज्य सरकार द्वारा जारी धारा 4 के तहत अधिसूचना और धारा के 6 तहत घोषणा को रद्द करने के लिए सर्टियोरारी/उत्प्रेषण की प्रकृति की रिट जारी करने की भी प्रार्थना की। हालाँकि अपीलार्थी ने कार्यवाही के विरुद्ध आक्षेप के कई आधार उठाए, जिसके कारण नियम 8 के तहत नोटिस जारी किया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि मुख्य बिंदु जो रिट याचिका की सुनवाई करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष दृढ़तापूर्वक निवेदन किया गया वह यह था कि अधिनियम की योजना और उपलब्ध सामग्रियों को ध्यान में रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि सरकार ने किसी को भी मंजूरी दे दी है, योजना के तहत यह नहीं कहा जा सकता कि अधिनियम की धारा 6 के तहत घोषणा जारी करने से पहले सरकार इस बात से संतुष्ट थी कि अधिसूचित भूमि सार्वजनिक उद्देश्य के लिए आवश्यक थी। संक्षेप में अपीलार्थी का रुख यह प्रतीत होता है कि कार्यवाही विभाग के सहायक सचिव द्वारा शुरू की गई है और उनके द्वारा या उनके उप सचिव द्वारा आदेश जारी किए गए हैं और इसलिए उनके द्वारा

कार्यवाही की गई, हालांकि राज्य सरकार के नाम पर की गई है, वैध नहीं है क्योंकि वे अधिनियम के अनुरूप नहीं हैं। दूसरी ओर राज्य सरकार ने तर्क दिया कि अधिनियम के प्रावधानों का उचित अनुपालन किया गया है और उसके द्वारा की गई कार्यवाही कानूनी और वैध है क्योंकि उन्हें उन अधिकारियों द्वारा संपादित किया गया है। जिन्हें उस दिशा में कार्य करने के लिए अधिकृत किया गया है।

इससे पहले कि हम रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों का उल्लेख करें, पक्षों द्वारा दी गई दलीलों और उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त की गई राय का मूल्यांकन करने के लिए अधिनियम के कुछ प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों का उल्लेख करना आवश्यक है। साथ ही संविधान के अनुच्छेद 166(3) के तहत पश्चिम बंगाल के राज्यपाल द्वारा जारी किए गये कार्यनियमों तथा भूमि एवं भू-राजस्व विभाग के प्रभारी मंत्री द्वारा बनाए गए स्थायी आदेश का उल्लेख करना भी आवश्यक है।

संविधान का अनुच्छेद 166 इस प्रकार हैः-

"अनुच्छेद 166, (1) राज्य सरकार की सभी शासनात्मक कार्रवाई राज्यपाल के नाम पर की जाएगी।

(2) राज्यपाल के नाम पर बनाए गए और निष्पादित किए गए आदेशों और अन्य दस्तावेजों को ऐसे तरीके से प्रमाणित किया जाएगा जैसा कि राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में निर्दिष्ट किया जा सकता है, और इस प्रकार प्रमाणित किए गए किसी आदेश या दस्तावेज की वैधता पर सवाल नहीं उठाया जाएगा, इस आधार पर कि यह राज्यपाल द्वारा बनाया या निष्पादित किया गया कोई आदेश या दस्तावेज़ नहीं है।

(3) राज्यपाल राज्य सरकार के कार्य के अधिक सुविधाजनक संचालन के लिए और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाएगा क्योंकि यह ऐसा कार्य नहीं है जिसके संबंध में राज्यपाल को संविधान के तहत या इसके अधीन अपने विवेक से कार्य करना आवश्यक है।"

अनुच्छेद 166(2) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए पश्चिम बंगाल के राज्यपाल ने 25 अगस्त, 1951 को निम्नलिखित नियम जारी किये थेः

(1) पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा या उसकी ओर से बनाए गए या निष्पादित किए गए सभी आदेश या दस्तावेज पश्चिम बंगाल के राज्यपाल

के आदेश द्वारा या उनके द्वारा किए गए या निष्पादित किए गए माने जाएंगे।

(2) ऐसे मामलों को छोड़कर जहां किसी अधिकारी को पश्चिम बंगाल सरकार के आदेश या दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने के लिए विशेष रूप से सशक्त किया गया है, ऐसे प्रत्येक आदेश या दस्तावेज़ पर पश्चिम बंगाल सरकार के या तो सचिव, संयुक्त सचिव, उप सचिव, एक अवर सचिव या एक सहायक सचिव द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे और इस तरह के हस्ताक्षर को ऐसे आदेशों या दस्तावेजों का उचित प्रमाणीकरण माना जाएगा।

अनुच्छेद 166(3) के तहत दिनांक 25 अगस्त, 1951 को पश्चिम बंगाल के राज्यपाल ने कार्य/व्यवसाय के नियम बनाए हैं । नियम 4,5, 19 और 20 जो अकेले ही महत्वपूर्ण हैं, इस प्रकार हैंः

> "4. सरकार का कार्य/व्यवसाय पहली अनुसूची में निर्दिष्ट विभाग में किया जाएगा और उन विभागों के बीच वर्गीकृत और वितरित किया जाएगा जैसा कि उसमें निर्धारित किया गया है।
>
> 5. राज्यपाल मुख्यमंत्री की सलाह पर एक या एक से अधिक विभाग को एक मंत्री के प्रभार में सौंपकर मंत्रियों के बीच सरकार के कामकाज का आवंटन करेगा।

19. किसी अन्य नियम द्वारा अन्यथा प्रदान किए जाने के अलावा, मामलों का निपटारा आमतौर पर प्रभारी मंत्री द्वारा या उसके अधिकार के तहत किया जाएगा, जो स्थायी आदेशों के माध्यम से ऐसे निर्देश दे सकता है जो वह मामलों के निपटान के लिए उचित समझे। ऐसे स्थायी आदेशों की प्रतियां राज्यपाल और मुख्यमंत्री को भेजी जाएंगी।

बशर्ते कि जब तक ऐसे स्थायी आदेश किसी मंत्री द्वारा नहीं किए जाते हैं, तब तक वे स्थायी आदेश जो इन नियमों के शुरू होने से ठीक पहले मौजूद व्यवसाय के नियमों के तहत किए गए थे और जो ऐसे मंत्री के प्रभारी विभाग में इस प्रकार के प्रारंभ से पहले, जहां तक हो सके, उस विभाग के लिए स्थायी आदेश माना जाएगा जो इस नियम के तहत बनाया गया।"

20. प्रत्येक मंत्री को स्थायी आदेशों के माध्यम से विभाग के सचिव के साथ व्यवस्था करनी होगी कि कौन से मामले या किस श्रेणी के मामलों को उनके व्यक्तिगत ध्यान में

लाया जाना है, ऐसे स्थायी आदेशों की प्रतियां राज्यपाल और मुख्यमंत्री को भेजी जाएंगी।

भूमि और भू-राजस्व विभाग के प्रभारी मंत्री, जिससे हम संबंधित हैं, ने इन कार्यवाहियों में 29 नवंबर, 1951 को व्यवसाय/कार्य के नियमों 19 और 20 के तहत स्थायी आदेश दिए। स्थायी आदेश क्रमांक 1 का आशय यह है कि उसमें निर्दिष्ट सभी मामले मंत्री के संज्ञान में लाये जायेंगे। स्थायी आदेश संख्या 2 में प्रावधान है कि, स्थायी आदेश संख्या 1 में निर्दिष्ट मामलों के अलावा, भूमि और भू-राजस्व विभाग से संबंधित उसमें उल्लिखित विभिन्न वस्तुओं को आदेश जारी करने से पहले मंत्री के ध्यान में लाया जाना चाहिए। अपीलार्थी के अनुसार, अधिनियम के तहत सरकार द्वारा की गई कार्यवाही में स्थायी आदेश संख्या2 की मद 18 या 28 या 29 के अंतर्गत आती है। इसलिए केवल वे मद ही हमारे द्वारा संदर्भित है और वे इस प्रकार हैः

"18. भूमि विकास और योजना अधिनियम के तहत गठित भूमि योजना समिति द्वारा उठाए जाने वाले सभी प्रस्तावित मामले।

28. बंजर भूमि के अधिग्रहण एवं व्यवस्थापन से संबंधित सभी योजनाएं।

29. धारा 4 के तहत अधिसूचना और धारा 41 के तहत समझौते से पहले भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत कंपनियों और औद्योगिक मामलों या सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण से संबंधित सभी मामले।"

स्थायी आदेश संख्या 5 में प्रावधान है कि सचिव उप या सहायक सचिवों  को ऐसे मामलों या मामलों की श्रेणियों के आदेश के लिए मंत्री को प्रस्तुत करे जिन्हें सचिव, प्रभारी मंत्री के अनुमोदन से सामान्य या विशेष आदेश द्वारा निर्देशित कर सकता है। इस स्थायी आदेश संख्या 5 के आधार पर, सचिव भूमि और राजस्व विभाग ने निम्नलिखित आदेश जारी किये हैंः

> ‘‘निम्नलिखित प्रावधानों के अधीन, विभाग की विभिन्न शाखाओं में मामलों का निपटारा किया जाएगा या जब आवश्यकता होगी कोई भी नियम या आदेश, जैसा भी मामला हो, उप सचिव या सहायक सचिव के आदेशों के तहत या उनके अधीन प्रभारी मंत्री को प्रस्तुत किया जाएगा, जो उस समय लागू कार्यालय संगठन के अनुसार उन मामलों या मामलों के वर्गों का प्रभारी है जिनसे क्रमशः मामलें संबंधित हैं।’’

प्रावधान

(1) यदि मामले में निपटाने वाला अधिकारी यह निर्णय लेता है कि यह इतना महत्वपूर्ण है कि इसे विभाग के किसी उच्च अधिकारी को प्रस्तुत किया जाना चाहिएए तो इसे वैसे ही प्रस्तुत किया जाएगा।

(2) सिद्धांतों या नीति के प्रमुख प्रश्नों से जुड़े सभी शाखाओं के मामले सचिव के माध्यम से प्रभारी मंत्री को प्रस्तुत किए जाएंगे।

अब हम अधिनियम में कुछ महत्वपूर्ण प्रावधानों का उल्लेख करेंगे। धारा 2(बी) 'विकास योजना' को किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि के विकास की योजना के रूप में परिभाषित करती है। धारा 2(सी) 'अधिसूचित क्षेत्र' को धारा 4 की उप-धारा 1 के तहत घोषित क्षेत्र के रूप में अधिसूचित क्षेत्र होना परिभाषित करती है। धारा3 के तहत, राज्य सरकार, नियमों के अनुसार, अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए एक प्राधिकारी को नियुक्त कर सकती है, जिसे निर्धारित प्राधिकारी कहा जाता है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि भूमि नियोजन समिति अधिनियम की धारा 3 के तहत नियुक्त निर्धारित प्राधिकारी है। धारा 4 के तहत राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, अधिसूचना में निर्दिष्ट किसी भी क्षेत्र को अधिसूचित क्षेत्र घोषित कर सकती है यदि वह संतुष्ट है कि ऐसे क्षेत्र में किसी भी भूमि की आवश्यकता है या किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए इसकी आवश्यकता होने की संभावना है। धारा 4 के तहत अधिसूचित क्षेत्र के भीतर किसी भी भूमि

में रुचि रखने वाला कोई भी व्यक्ति उसमें निर्धारित समय के भीतर उस भूमि के अधिग्रहण बाबत् आपत्तियां दायर कर सकता है जिसमें वह शामिल है और कलेक्टर को उक्त आपत्तिकर्ता को सुनवाई का अवसर देना होगा और आपत्तियों को सुनने और ऐसी आगे की जांच करने के बाद, कलेक्टर को अपनी रिपोर्ट के साथ मामला राज्य सरकार को सौंपना होगा। धारा 5 के तहत राज्य सरकार किसी भी अधिसूचित क्षेत्र के संबंध में नियमों के अनुसार विकास योजना तैयार करने के लिए निर्धारित प्राधिकारी को निर्देश दे सकती है या किसी कंपनी या स्थानीय प्राधिकरण को अधिकृत कर सकती है। उक्त धारा ऐसी योजनाओं को तैयार करने और उसकी मंजूरी के लिए राज्य सरकार को प्रस्तुत करने का भी प्रावधान करती है। सरकार इस योजना को या तो बिना किसी संशोधन के या ऐसे संशोधनों के अधीन मंजूरी दे सकती है जो वह उचित समझे। धारा 6 के तहत जब एक विकास योजना स्वीकृत की जाती है, और जब राज्य सरकार संतुष्ट हो जाती है कि अधिसूचित क्षेत्र में कोई भी भूमि जिसके लिए ऐसी योजना स्वीकृत की गई है, ऐसी योजना को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से आवश्यक है, तो इस आशय की घोषणा की जाती है कि ऐसी भूमि किसी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए आवश्यक राज्य सरकार द्वारा किया जाएगा। धारा 10 में सरकार द्वारा निर्धारित प्राधिकारी को उसके द्वारा स्वीकृत किसी भी विकास योजना को क्रियान्वित करने या नियमों के अनुसार क्रियान्वित करने का निर्देश देने

का प्रावधान है। धारा 14 सरकार को अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए और विशेष रूप से उप-धारा 2 में उल्लिखित मामलों के संबंध में नियम बनाने का प्रावधान करती है।

राज्य सरकार ने पश्चिम बंगाल भूमि विकास और योजना नियम, 1948 नामक नियम बनाए हैं जिनका उल्लेख पहले किया गया है। नियम 3(1) के तहत अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए प्राधिकारी राज्य सरकार द्वारा नियुक्त भूमि योजना समिति है। नियम 5 निर्धारित प्राधिकारी को एक विकास योजना तैयार करने और प्रस्तुत करने का प्रावधान करता है जब राज्य सरकार उस प्राधिकारी को ऐसे निर्देश देती है, और यह ऐसी योजना की तैयारी और प्रस्तुत करने से संबंधित विभिन्न अन्य मामलों से भी निपटती है।

अपीलार्थी की रिट याचिका पर, प्रथम बार, कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सुनवाई की गई। अपीलार्थी ने मोटे तौर पर दो तर्क प्रस्तुत किए। पहला तर्क यह था कि अधिसूचनाए धारा 4 के तहत जारी की गई थी और साथ ही धारा 6 के तहत की गई घोषणा और अधिसूचित क्षेत्र के लिए योजना की मंजूरी, सभी कार्यवाही पश्चिम बंगाल सरकार के भूमि और राजस्व विभाग के सहायक सचिव द्वारा की गई थी और सरकार के भूमि और राजस्व विभाग और सरकार ने इन कार्यवाहियों

में किसी भी तरह से अपने मस्तिष्क का उपयोग नहीं किया, और इसलिए, संपूर्ण कार्यवाही शून्य है। इस मद के तहत, अपीलार्थी ने यह भी दलील दी किए चूँकि संविधान के अनुच्छेद 154(1) के तहत राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित है, अधिनियम की धारा 4 और 6 के तहत राज्यपाल की संतुष्टि पर विचार किया जाता है। दूसरा तर्क यह था कि, संविधान के अनुच्छेद 166(3) राज्यपाल द्वारा बनाए गए व्यवसाय के नियमों के तहत, भूमि और भू-राजस्व विभाग से संबंधित कार्य/व्यवसाय, जिससे ये कार्यवाही संबंधित है, को प्रभारी मंत्री द्वारा व्यक्तिगत रूप से निपटाया जाना है; और अधिनियम के तहत की जाने वाली कार्यवाही संबंधित मंत्री द्वारा विभागीय अधिकारियों को नहीं सौंपी जा सकती है। इस विशेष मामले में, चूंकि प्रभारी मंत्री के संदर्भ के बिना विभाग के सहायक सचिव या उप सचिव द्वारा कार्यवाही की गई है और आदेश जारी किए गए हैं, संपूर्ण कार्यवाही अवैध और शून्य है। वैकल्पिक रूप से यह भी आग्रह किया गया था किए भले ही प्रभारी मंत्री उचित स्थायी आदेश देकर इनमें से किसी भी कार्य को अधीनस्थ अधिकारियों को सौंप सकते हैं, सचिव या सहायक सचिव को ऐसे मामलों से निपटने के लिए अधिकृत करने वाला कोई प्रतिनिधिमंडल नहीं है। इस संबंध में अपीलार्थी ने प्रभारी मंत्री द्वारा जारी स्थायी आदेश संख्या2 में संदर्भित मद 18, 28 और 29 पर भरोसा किया है, जो दर्शाता है कि उन मामलों को केवल मंत्री द्वारा ही निपटाया जाना है।

राज्य की ओर से आग्रह किया गया कि, जैसा कि अधिसूचना धारा 4 के तहत जारी की गई है और धारा 6 के तहत की गई घोषणा संविधान के अनुच्छेद 166(2) के तहत राज्यपाल द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा निर्दिष्ट तरीके से प्रमाणित किया गया है । ऐसी स्थिति में अपीलार्थी के लिए यह खुला नहीं था कि वह पीछे जाकर अधिसूचना या घोषणा की वैधता पर सवाल उठा सके, जिसमें यह कहा गया था कि राज्यपाल की राय थी कि सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि की आवश्यकता थी। राज्य के अनुसार इस वाद से यह पता चलता है कि राज्यपाल की संतुष्टि स्पष्ट रूप से सामने आ रही है। प्रत्यर्थीगण ने यह भी बताया कि राज्यपाल ने संविधान के अनुच्छेद 166(3) के तहत और नियम 19 और 20 के तहत कार्य/व्यवसाय के नियम जारी किए थे इसलिए, विशेष विभाग के प्रभारी मंत्री को अधिकार दिया गया है। स्थायी आदेशों के माध्यम से, अपने विभाग में मामले के निपटान के लिए ऐसे निर्देश दे, जैसा वह उचित समझे। इस मामले में भूमि और भूमि राजस्व विभाग के प्रभारी मंत्री को प्रदत्त ऐसे अधिकार के आधार पर, मंत्री ने 29 नवंबर, 1951 को स्थायी आदेश दिए हैं। प्रत्यर्थीगण ने आगे आग्रह किया कि इस मामले में राज्य सरकार द्वारा अधिनियम के तहत की गई कार्यवाही, स्थायी आदेश संख्या 2 में निर्दिष्ट किसी भी मद के अंतर्गत नहीं आती है, जो उन मामलों से संबंधित है जिन्हें ध्यान में लाया जाना है आदेश जारी करने से पहले मंत्री

के इन मामलों को उक्त विभाग के सहायक सचिव द्वारा वैध रूप से निपटाया जा सकता है।

विद्वान एकल न्यायाधीश ने, राज्यपाल द्वारा जारी किए गए व्यवसाय के नियमों, साथ ही प्रभारी मंत्री द्वारा दिए गए स्थायी आदेशों और संविधान के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार करने के बाद माना है कि अपीलार्थी का यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता कि ऐसे मामलों में राज्यपाल को ही संतुष्ट होना पड़ता है। दूसरी ओर, विद्वान न्यायाधीश ने माना है कि, विचाराधीन मामलों के संबंध में, राज्य सरकार के प्रासंगिक व्यवसाय को राज्यपाल द्वारा, व्यवसाय के नियम जारी करके, संबंधित मंत्री को आवंटित किया गया है। विद्वान न्यायाधीश ने यह भी माना है कि व्यवसाय के नियमों के तहत, प्रभारी मंत्री को निपटाए जाने वाले किसी विशेष कार्य को अपने अधीनस्थों को सौंपने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन, प्रभारी मंत्री द्वारा इस मामले में दिए गए स्थायी आदेशों पर विचार करने के बाद, विद्वान न्यायाधीश का मानना है कि अधिनियम के तहत सरकार द्वारा की गई विभिन्न कार्यवाही, स्थायी आदेश संख्या 2 के मद 18 या 29 के तहत आएंगी, इस प्रकार इन कार्यवाहियों को आदेश जारी करने से पहले प्रभारी मंत्रालय को भेजा जाना चाहिए था। विद्वान न्यायाधीश के समक्ष महाधिवक्ता द्वारा यह स्वीकार किया गया कि मंजूरी या संतुष्टि के मामले में, जो भी कार्यवाही चुनौती के अधीन है, उनमें से किसी पर भी मंत्री का ध्यान नहीं

गया, लेकिन सहायक सचिव, या उप सचिव द्वारा निपटा दिया गया। धारा 4 के तहत दिनांक 4 फरवरी, 1955 को अधिसूचना जारी होने से शुरू होने वाली संपूर्ण कार्यवाही, जो नियम 8 के तहत 28 अगस्त, 1956 दिनांकित नोटिस जारी करने के साथ समाप्त होती है, अवैध और शून्य मानी गयी थी। परिणामस्वरूप, विद्वान न्यायाधीश ने अपीलार्थी द्वारा रिट याचिका में चाहा गया अनुतोष स्वीकार कर लिया।

विद्वान न्यायाधीश के इस आदेश को कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ के समक्ष दो अपीलों में चुनौती दी गई, जो 1958 के आदेश संख्या 397 और 398 है। एक अपील राज्य द्वारा, प्रत्यर्थी संख्या 2 व 4 के साथ दायर की गई और दूसरी अपील तीसरे प्रत्यर्थी किसान सोसायटी के द्वारा दायर की गई थी। दोनों अपीलों में अधिनियम के तहत सरकार द्वारा की गई संपूर्ण कार्यवाही को रद्द करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध एक सामान्य आक्षेप था। खंड पीठ ने यह भी माना है कि अनुच्छेद 166(2) केवल इस आशय का है कि, जब प्रमाणीकरण उसमें उल्लिखित तरीके से किया जाता है तथा जो निष्कर्ष निकाला जाता है वह यह है कि आदेश राज्यपाल द्वारा किया गया है; लेकिन क्या आदेश देते समय राज्यपाल ने कानून के अनुसार कार्य किया है, यह अभी भी अधिनिर्णयन के लिए खुला है। विद्वान न्यायाधीशों ने यह भी माना कि, राज्यपाल द्वारा जारी व्यवसाय के नियमों के तहत प्रदत्त शक्ति के आधार

पर, उचित स्थायी आदेश देकर, अपने कार्यों को अपने अधीनस्थों को सौंपने और ऐसे कार्यों के निपटान को अधिकृत करने के लिए एक मंत्री के लिए यह खुला है। विद्वान न्यायाधीशों ने तब इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या भूमि राजस्व विभाग के संबंध में 29 नवंबर, 1951 को दिए गए स्थायी आदेशों में ऐसा कोई प्रतिनिधिमंडल था। वे अपीलार्थी के इस तर्क को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं कि स्थायी आदेश संख्या2 की मद संख्या 29, इन कार्यवाहियों पर लागू होती है, जिससे उन्हें स्वयं मंत्री द्वारा निपटाया जाना आवश्यक हो जाता है। विद्वान न्यायाधीशों का यह विचार है कि उक्त मद केवल भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत किए गए भूमि अधिग्रहण पर लागू होगी और वर्तमान कार्यवाही अधिनियम के तहत होने के कारण, वह प्रावधान लागू नहीं होगा। विद्वान न्यायाधीशों का यह भी मानना है कि अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने से जुड़ी कार्यवाही मंत्री द्वारा बनाये गये स्थायी आदेश क्रमांक 2 के मद क्रमांक 18 के अंतर्गत नहीं आते हैं, लेकिन उनका विचार है कि उक्त मद अधिसूचना जारी होने के बाद अधिनियम के तहत सरकार द्वारा की गई सभी कार्यवाहियों पर लागू होगी और इसलिए प्रभारी मंत्री को धारा 5 के तहत योजना की मंजूरी से जुड़े मामलों और धारा 6 के तहत घोषणा के मुद्दे से निपटना चाहिए था लेकिन जैसा कि मंत्री द्वारा स्वीकार्य रूप से उन कार्यवाहियों से निपटा नहीं गया, उसके बाद के चरण में विद्वान न्यायाधीशों

ने माना कि धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने के चरण के बाद जो सभी आदेश पारित किए गए और अधिसूचनाएं जारी की गई जिन्हें शून्य मानकर निरस्त करना होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि विद्वान न्यायाधीशों ने माना कि धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी करना ऐसा मामला नहीं है जिसे मंत्री द्वारा निपटाया जाना है और चूंकि उस संबंध में कार्यों का अभ्यास स्थायी आदेश के तहत सौंपा गया है, उस अधिसूचना को कायम रहने की अनुमति दी गई थी। परिणामस्वरूप, विद्वान न्यायाधीशों ने विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को ऊपर बताई गई सीमा तक संशोधित किया।

इन अपीलों में प्रमाणपत्र द्वारा एकमात्र प्रश्न जो विचार के लिए उत्पन्न होता है वह कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों की यथार्थता के संबंध में है, जो अधिनियम की धारा 4 के तहत दिनांक 4 फरवरी, 1955 को जारी अधिसूचना की वैधता को बरकरार रखते हुए किया गया था।

अपीलार्थी की ओर से, विद्वान अधिवक्ता श्री बिशन नारायण ने वस्तुतः वही तर्क प्रस्तुत किए जो उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका में उठाए गए थे। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार अधिनियम की धारा 5 और 6 के तहत जारी अधिसूचनाओं और आदेशों को निरस्त करने के लिए खंड

पीठ ने जो कारण बताए हैं साथ ही अन्य बाद की कार्यवाही धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना पर समान बल के साथ लागू होते हैं। विद्वान अधिवक्ता का यह भी निवेदन रहा कि चूंकि राज्य की कार्यकारी शक्ति अनुच्छेद 154 के तहत राज्यपाल में निहित है, इसलिए अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने से पहले जिस संतुष्टि पर विचार किया गया था, उस पर राज्यपाल को स्वयं विचार करना चाहिए था। अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि, भले ही व्यवसाय के नियम संविधान के अनुच्छेद 166(3) के तहत राज्यपाल द्वारा जारी किये गये हो एक प्रभारी मंत्री उस संबंध में उपयुक्त स्थायी आदेश देकर अपने कार्यों को सौंप सकता है, इस मामले में प्रभारी मंत्री द्वारा बनाए गए स्थायी आदेश यह स्पष्ट रूप से दिखाएंगे कि अधिनियम के तहत की जाने वाली कार्यवाही से जुड़े सभी मामले मंत्री द्वारा स्वयं निपटाए जाने के लिए आरक्षित किए गए हैं। इसलिए अधिवक्ता के अनुसार यद्यपि माना जाता है कि मंत्री द्वारा इनमें से किसी भी कार्यवाही से निपटा नहीं गया है, यहां तक कि धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी करने का मुद्दा जो अवैध व शून्य है, भी नहीं उठाया है। इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने हमें इस मामले में प्रभारी मंत्री द्वारा बनाए गए स्थायी आदेश संख्या 2 के 18, 28 और 29 का हवाला दिया। हम इस स्तर पर यह इंगित कर सकते है कि हमारे सामने कोई विवाद नहीं उठाया गया था कि भले ही व्यवसाय के नियमों द्वारा अधिकृत किया

गया हो, एक प्रभारी मंत्री कानूनी तौर पर उचित स्थायी आदेश देकर ऐसे किसी भी मामले को अपने अधीनस्थों को नहीं सौंप सकता है।

राज्य की ओर से उच्च न्यायालय में उठाए गए वही तर्क, विद्वान अधिवक्ता श्री बी. सेन द्वारा हमारे समक्ष रखे गए हैं।

हम पहले ही व्यवसाय के नियमों और स्थायी आदेशों का उल्लेख कर चुके हैं। हम संविधान के अनुच्छेद 166(2)के दायरे के संबंध में विद्वान एकल न्यायाधीश और कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ दोनों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से पूर्णतः सहमत हैं। विद्वान न्यायाधीशगण अपने विचार में बिल्कुल सही हैं कि अनुच्छेद 166(2) के तहत प्रमाणीकरण जो निर्णायक बनाता है, वह यह है कि आदेश राज्यपाल द्वारा दिया गया है, लेकिन अग्रिम प्रश्न यह है कि क्या आदेश देते समय राज्यपाल ने कानून के अनुसार कार्य किया है, यह अधिनिर्णयन के लिए खुला है। इस संबंध में हम इस न्यायालय के निर्णय आर. चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य का उल्लेख कर सकते है। सुब्बा राव, जे. (जैसा कि वे उस समय थे) पृष्ठ 376 पर अनुच्छेद 166 की परिधि व्याख्या करते है जो इस प्रकार हैः

> "संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत किसी राज्य की सरकार की सभी शासनात्मक कार्यवाही को राज्यपाल के नाम पर किया जाना व्यक्त किया जाएगा, और राज्यपाल के

नाम पर किए गए आदेशों को इस तरह से प्रमाणित किया जाएगा जैसा कि राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में निर्दिष्ट किया जा सकता है और इस प्रकार प्रमाणित आदेश की वैधता पर इस आधार पर प्रश्न नहीं उठाया जाएगा कि यह राज्यपाल द्वारा दिया गया आदेश नहीं है।

यदि इस अनुच्छेद में निर्धारित शर्तों का अनुपालन किया जाता है, तो आदेश को इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है कि यह राज्यपाल द्वारा दिया गया आदेश नहीं है। यह तर्क दिया गया है कि चूंकि विचाराधीन आदेश राज्यपाल के नाम से जारी नहीं किया गया था, इसलिए आदेश अमान्य था और उस आदेश के अनुसार कोई साक्षात्कार आयोजित नहीं किया जा सकता था। इस विषय पर कानून सुस्थापित है। दत्तात्रेवा मोरेश्वर पंगारकर बनाम बोम्बे राज्य (1952 एस.सी.आर. 612, 625) दास जे. जैसा कि वे उस समय थे, ने अवलोकन किया:

'अनुच्छेद 166 की आवश्यकताओं का कड़ाई से अनुपालन इस आदेश को बल प्रदान करता है कि इसे इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि यह राज्यपाल द्वारा दिया गया आदेश नहीं है। इसलिए, यदि उस अनुच्छेद की आवश्यकताओं का अनुपालन नहीं किया जाता है, तो

परिणामी बचाव का दावा राज्य द्वारा नहीं किया जा सकता है। हालांकि यह आदेश अपने आप में दूषित नहीं है। अनुच्छेद 166 सभी कार्यकारी कार्रवाई को उसमें निर्धारित तरीके से प्रमाणित करने का निर्देश देता है लेकिन उन प्रावधानों का अनुपालन करने में चूक कार्यकारी कार्रवाई को अमान्य नहीं बनाती है। इसलिए, कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के लिए आवश्यक है कि उपयुक्त सरकार को यह निर्णय लेना चाहिए कि क्या धारा 11(1) के तहत निरोध आदेश की पुष्टि होनी चाहिए या नहीं ।'

इसी दृष्टिकोण को इस न्यायालय ने बोम्बे राज्य बनाम पुरुषोत्तम जोग नाइक (1952 एस.सी.आर. 674), में दोहराया था, जहां यह बताया गया था कि यद्यपि उस समय विचाराधीन आदेश दोषपूर्ण था, राज्य सरकार के लिए अन्य तरीकों से यह साबित करने के लिए खुला था कि ऐसा आदेश वैध रूप के किया गया था। इस न्यायालय द्वारा बाद के निर्णयों में इस दृष्टिकोण की पुष्टि की गई हैः घायो मा◌ॅल एंड संस बनाम दिल्ली राज्य (1959 एस.सी.आर. 1424) देखें, और इसलिए, यह स्थापित कानून है कि संविधान के अनुच्छेद 166 के प्रावधान केवल स्वभाव में निर्देशात्मक हैं अनिवार्य नहीं है और यदि उनका अनुपालन नहीं किया जाता है, तो यह

तथ्य के प्रश्न के रूप में स्थापित किया जा सकता है कि वादग्रस्त आदेश वास्तव में राज्य सरकार या राज्यपाल द्वारा में जारी किया गया था। ''

हम भी उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हैं कि इस मामले में राज्यपाल की व्यक्तिगत संतुष्टि आवश्यक नहीं थी क्योंकि यह ऐसा कार्य नहीं है जिसके संबंध में राज्यपाल को संविधान के अनुसार या इसके तहत अपने विवेक से कार्य करने की आवश्यकता है। हालाँकि किसी राज्य की कार्यकारी सरकार राज्यपाल में निहित होती है, वास्तव में इसे मंत्रियों द्वारा चलाया जाता है और इस मामले विशेष में कार्य/व्यवसाय के नियम 4 और 5 के तहत ऊपर उल्लिखित सरकार का कार्य/व्यवसाय उसकी पहली अनुसूची में निर्दिष्ट विभिन्न विभागों में किया जाना है। इसमें मद 5 भूमि और भूमि राजस्व विभाग है, और राज्यपाल ने उस विभाग का कार्य एक मंत्री को आवंटित किया है। हम उच्च न्यायालय के इस विचार से भी सहमत हैं कि उक्त प्रभारी मंत्री को 25 अगस्त 1951 में राज्यपाल द्वारा जारी कार्य नियमों के तहत अपने विभाग में मामलों के निपटान के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 166(3) के तहत स्थायी आदेश देने की शक्ति प्राप्त है। इस मामले में, इसमें कोई विवाद नहीं है कि भूमि और भूमि राजस्व विभाग के प्रभारी मंत्री ने व्यवसाय के नियमों 19 और 20 के तहत उन्हें दी गई शक्तियों के आधार पर 29 नवंबर, 1951 को स्थायी आदेश दिए हैं।

इस मामले में, अपीलार्थी के अनुसार अधिनियम के तहत अधिग्रहण से जुड़ी संपूर्ण कार्यवाही, स्थायी आदेश संख्या 2 के मद 18, 28 या 29 के तहत आएगी और परिणामस्वरूप उन्हें आदेश जारी होने से पहले मंत्री द्वारा निपटाए जाने की आवश्यकता होगी। चूंकि अधिनियम की धारा 4 के तहत जारी की गई अधिसूचना की वैधता अकेले विचार के लिए उठती है, इन अपीलों में एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या उस मामले को भी प्रभारी मंत्री के समक्ष या तो स्थायी आदेश संख्या 2 के मद 18,28 या 29 के तहत रखा जाना आवश्यक था। उन वस्तुओं का उल्लेख हमारे द्वारा इस निर्णय के पहले भाग में किया गया है।

हम अपीलार्थी के इस तर्क को खारिज करने में कोई संशय नहीं रखते है धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने से संबंधित कार्यवाही में मद 29 के तहत कार्रवाई की जाएगी। जैसा कि कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के विद्वान न्यायाधीशों ने व्यक्त किया, वह वस्तु भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत केवल अधिग्रहण से संबंधित है और जहां तक  इस मामले में धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने का प्रश्न है, अधिनियम के तहत है, जो उक्त मद में शामिल नहीं है। अतः मद 29 लागू नहीं होता है। विद्वान अधिवक्ता ने तब आग्रह किया कि इसे बंजर भूमि के अधिग्रहण और निपटान से संबंधित एक योजना माना जाना चाहिए, जिस स्थिति में मद संख्या 28 आकर्षित होगा। जहां तक इसका प्रश्न है, रिट

याचिका पर विचार करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी के तर्क को खारिज कर दिया है। विद्वान न्यायाधीश ने तथ्य के रूप में पाया है कि यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि भूमि, जो धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने का विषय है, बंजर भूमि हैं; और इसलिए उन्होंने माना है कि यह नहीं कहा जा सकता कि अधिसूचना बंजर भूमि के अधिग्रहण से संबंधित है। विद्वान न्यायाधीश ने यह भी कहा है कि अपीलार्थीगण ने भी अपनी रिट याचिका में यह आरोप नहीं लगाया है कि भूमि, या उसका कोई हिस्सा बंजर है। इस दृष्टिकोण में, विद्वान न्यायाधीश ने माना है कि साक्ष्यों के आधार पर, यह मानना संभव नहीं है कि अधिग्रहण बंजर भूमि से संबंधित है। इसमें कोई संदेह नहीं है, खंड पीठ ने इस विषय पर कोई राय व्यक्त नहीं की है लेकिन जैसा कि अभिलेख अब मौजूद है हमें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को स्वीकार करना होगा, इस मामले में अपीलार्थी मद संख्या 28 पर भरोसा नहीं कर सकता है।

इससे हमारे सामने यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करना मंत्री द्वारा जारी स्थायी आदेश संख्या 2 की मद संख्या 18 के अंतर्गत आने वाला मामला है। यदि यह उक्त मद के अंतर्गत आने वाला मामला है तो इसमें कोई विवाद नहीं हो सकता है कि धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी होने से पहले मामले का

निपटारा प्रभारी मंत्री को करना चाहिए था। इस मामले में जैसा कि हमने पहले ही इंगित किया है कि प्रभारी मंत्री ने उन कार्यवाहियों को नहीं निपटाया है और यह स्वीकार किया जाता है कि पश्चिम बंगाल सरकार के भूमि और राजस्व विभाग के सहायक सचिव, जिन्होंने धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी की थी, ने अकेले ही मामले को निपटाया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने, निस्संदेह, अपीलार्थी के इस तर्क को स्वीकार किया है कि स्थायी आदेश संख्या 2 की मद संख्या 18 अधिनियम के तहत की गई सभी कार्यवाहियों पर लागू होती है, जिसमें अधिसूचना जारी करना भी शामिल है। दूसरी ओर, खंड पीठ के विद्वान न्यायाधीशों ने इस विषय पर विपरीत दृष्टिकोण अपनाया है। उपयुक्त और नियमों तथा मद संख्या 18 द्वारा निपटाए गए मामले को ध्यान में रखते हुए, हम खंड पीठ के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हैं कि स्थायी आदेश संख्या 2 के मद संख्या 18, धारा 4 के तहत अधिसूचना से जुड़ी कार्यवाही पर लागू नहीं होता है।

हमने अधिनियम के संपूर्ण प्रावधानों के साथ-साथ उसके तहत बनाए गए नियमों का भी अध्ययन किया है और जहां तक हम देख सकते हैं भूमि योजना समिति, जो अधिनियम की धारा 3 के तहत निर्धारित प्राधिकारी है तभी सामने आती है जब राज्य सरकार धारा 5 के तहत एक विकास योजना की तैयारी और उसके बाद के चरणों के संबंध में कार्रवाई

करती है। भूमि योजना समिति अधिनियम के तहत स्थापित, उस चरण के परिदृश्य में नहीं आती है जब सरकार अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करती है। इस संबंध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अधिनियम के धारा 2(सी) में अभिव्यक्ति 'अधिसूचित क्षेत्र' का अर्थ उस क्षेत्र से है जो धारा 4 की उपधारा 1 के अंतर्गत अधिसूचित क्षेत्र होना बताया है। धारा 4 के तहत राज्य सरकार को राजपत्र में एक अधिसूचना जारी करके अधिसूचना में निर्दिष्ट किसी भी क्षेत्र को अधिसूचित क्षेत्र घोषित करने की शक्ति दी गई है यदि वह संतुष्ट है कि ऐसे क्षेत्र में कोई भूमि है जिसकी किसी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए उसकी आवश्यकता है या उसकी आवश्यकता होने की संभावना है। अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत ऐसा कोई प्रावधान नहीं है, जो राज्य सरकार की ओर से इस स्तर पर भूमि योजना समिति से परामर्श करना अनिवार्य बनाता हो। न ही हम अधिनियम या नियमों में ऐसा कोई प्रावधान ढूंढ पा रहे हैं, जो अधिनियम की धारा 4 के तहत सरकार द्वारा अधिसूचना जारी करने से पहले भूमि योजना समिति से परामर्श करने, या किसी मामले का प्रस्ताव करने का अधिकार देता हो। अधिनियम या नियमों के तहत, भूमि योजना समिति को इस स्तर पर भाग लेने के लिए कोई कर्तव्य नहीं लगाया गया है, या कार्य सौंपा गया है।

इस संबंध में कोई संदेह नहीं है श्री बिशन नारायण ने हमें भूमि योजना समिति की 270वीं बैठक 21 जनवरी, 1955 की कार्यवाही का हवाला देते हुए अपने तर्क के समर्थन में कहा कि यह भूमि योजना समिति है जिसने अधिनियम के तहत प्रश्नगत भूमि के अधिग्रहण का प्रस्ताव रखा है इसलिए यह मामला स्थायी आदेश संख्या 2 के मद 18 के अंतर्गत आता है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा संदर्भित कार्यवाही में यह कहा गया है कि भूमि योजना समिति ने तीसरे प्रत्यर्थी द्वारा घोला और नाटागढ़ गांवों में 28.59 एकड़ भूमि के अधिग्रहण और विकास के लिए प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार किया। भूमि योजना समिति की एक सिफारिश यह भी है कि तीसरे प्रत्यर्थी द्वारा संदर्भित भूमि सार्वजनिक प्रयोजन के लिए आवश्यक है और इसलिए उसने अधिनियम की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी करने की सिफारिश की। निस्संदेह यह देखा गया है कि भूमि नियोजन समिति ने इस मामले में कुछ रुचि ली है और अधिग्रहण के संबंध में तीसरे प्रत्यर्थी के प्रस्ताव का समर्थन किया है, लेकिन प्रश्न यह है कि क्या यह भूमि योजना समिति के कर्तव्यों या कार्यों में से एक है जिसे वह अधिनियम या नियमों के तहत निर्वहन करने के लिए बाध्य है। हमारी दृष्टि से इसका उत्तर नकारात्मक होना चाहिए। अधिनियम और नियमों के संदर्भ में भूमि योजना समिति को ऐसा कोई अधिकार नहीं दिया गया है। हो सकता है कि वह समिति विशेष मामलों में सरकार को सलाह या सुझाव दे। सरकार भी

उस निकाय से परामर्श कर सकती है और उसकी सलाह या सुझावों पर कार्य कर सकती है। लेकिन स्थायी आदेश संख्या 2 की मद संख्या 18 को लागू करने से पहले यह स्थापित किया जाना चाहिए कि केवल भूमि योजना समिति के परामर्श से अधिनियम की धारा4 के तहत अधिसूचना जारी करना सरकार का दायित्व है, जिस स्थिति में यह कहा जा सकता है कि समिति अधिनियम के तहत एक कर्तव्य का निर्वहन कर रही है। हम ऐसा कोई प्रावधान नहीं पाते है कि सरकार की ओर से उस स्तर पर भूमि योजना समिति से परामर्श करना अनिवार्य बनाता हो। धारा 4 की शर्तें यह स्पष्ट करती है कि यह वास्तव में सरकार की संतुष्टि पर है कि किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए किसी भूमि की आवश्यकता है या होने की संभावना है कि उस क्षेत्र को अधिसूचित क्षेत्र घोषित किया जाना चाहिए, के लिए एक अधिसूचना जारी की जाती है।

अधिनियम और नियम स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि धारा 5 के चरण, जब राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्राधिकारी अर्थात् भूमि योजना समिति को एक विकास योजना तैयार करने का निर्देश दिया जाता है तो उक्त समिति अधिनियम के तहत अपने वैधानिक कार्यों का निर्वहन कर रही है।

संक्षेप में, हम अपीलार्थी के तर्कों को स्वीकार करने के इच्छुक नहीं हैं, कि अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करना एक ऐसा

मामला है जिसे स्वयं प्रभारी मंत्री द्वारा निपटाया जाना चाहिए, इस आधार पर कि यह स्थायी आदेश संख्या 2 के मद 18 के अंतर्गत आता है। वह मद, जैसा कि ऊपर बताया गया है, लागू नहीं होती। यदि ऐसा है तो यह स्पष्ट है कि एक अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करना और इस बात पर संतुष्टि प्राप्त की जानी चाहिए कि विचाराधीन क्षेत्र में भूमि, सार्वजनिक प्रयोजन के लिए आवश्यक है या होने की संभावना है, ऐसे मामले हैं जिन्हें स्वयं मंत्री द्वारा निपटाए जाने की आवश्यकता नहीं है। स्थायी आदेश संख्या 5 के तहत प्रभारी मंत्री ने सचिव को विभाग के एक उप या सहायक सचिव को कुछ प्रकार के मामलों के निपटारे की अनुमति देने के लिए अधिकृत किया है और सचिव ने एक आदेश भी जारी किया है, इससे पहले स्थायी आदेश संख्या 5 के अनुरूप जिसे संदर्भित किया गया है और यह इस प्रावधान के आधार पर है कि अधिनियम की धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना पश्चिम बंगाल सरकार के भूमि एवं राजस्व विभाग के सहायक सचिव द्वारा जारी किया गया था। हम अधिनियम की धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना, दिनांक 4 फरवरी, 1955 की वैधता को बरकरार रखने के लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा दिए गए कारणों से पूर्णतः सहमत हैं।

समापन करने से पूर्व हम यह स्पष्ट करते है कि हमारे समक्ष एेसा कोई तर्क नहीं दिया गया कि अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत जारी की

जाने वाली अधिसूचना जारी करने की  शक्तियां प्रभारी मंत्री को नहीं दी जा सकती है आैर एेसी शक्तियां स्वयं मंत्री में ही निहित रहेंगी, अतः हमारे लिए आवश्यक नहीं था कि उस विषय पर विचार किया जाये। जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है तमाम बहस में केवल इस बिन्दु पर जोर दिया गया था कि मंत्री ने स्थायी आदेशों के अंतर्गत डेलिगेशन ही नहीं किया था।

परिणाम यह है कि अपीलों में सार नहीं है और उन्हें खर्चे के साथ निरस्त किया जाता है, जैसा कि 1964 की सिविल अपील संख्या 216 में निर्धारित है।

अपीलें खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **अनिल कुमार गुप्ता** (आर.जे.एस. डी.जे. कैडर) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है औरकिसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक औरआधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।